ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 90-91**

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jan-Mar. 2025

पंचायती राज व्यवस्था का ग्रामीण जीवन पर प्रभाव

डॉ0 गीता कुमारी

अतिथि शिक्षिका–समाजशास्त्र विभाग, एस. एन. सिन्हा कॉलेज, जहानाबाद (बिहार) भारत

Received-15.01.2025, Revised-22.01.2025, Accepted-28.01.2025 E-mail:drgita74@gmail.com

सारांशः 12 जनवरी 1958 को राष्ट्रीय विकास परिषद् ने बलवंत राय मेहता समिति की सिफारिशों को स्वीकार लिया और तब से लेकर आन्ध्र प्रदेश, असम, बिहार, महाराष्ट्र, मैसूर, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल, प्रायः सभी राज्यों में पंचायती राज को कार्यन्वित किया है।

कुंजीभूत शब्द– पंचायती राज व्यवस्था, ग्रामीण जीवन, परमेश्वर की परम्परा, राजनैतिक संगठन, स्वायत्त शासन, 4. राजनैतिक

पंचायती राज की प्रेरणा का मूल स्त्रोत पंच परमेश्वर की परम्परा थी, जिसके अनुसार पंचों के माध्यम से भगवान बोले हैं। भारतीय संविधान में केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों का उल्लेख है, पर उसमें राजनैतिक संगठन के रूप में पंचायती राज की कल्पना न थी। राज्य के निर्देशक सिद्धान्तों में अवश्य स्वायत्त शासन की इकाई के रूप में ग्राम पंचायतों को संगठित करने का आदेश है। पंचायती राज को अपनाने का मुख्य उद्धेश्य जनता का सहयोग प्राप्त करना था। पंचायती राज को स्थापित हुए अब काफी समय हो चूका है और समाज के किसी भी अध्येता के लिए यह जानना आवश्यक और महत्वपूर्ण है कि इस नये परीक्षण का ग्रामीण जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा। इस सम्बन्ध में विभिन्न राज्यों में अनेक अध्ययन किये गये हैं।

Hugh Gray ने आन्ध्र प्रदेश में पंचायती राज का गहन अध्ययन किया और वे निम्न मुख्य निष्कर्षों पर पहुँचे[1]:

1. पंचायती राज के अर्न्तगत मुख्य जिलाधीश का कार्य बदल रहा है जिला अधिकारी जिला परिषद के कार्यकारी अधिकारी नहीं है और पंचायती क्षेत्र समितियों के गुणों की तुलनों में जिला परिषद के अध्यक्ष की स्थिति काफी कमजोर है।
2. त्रिस्तरीय व्यवस्था में वास्तविक सत्ता बीच के स्तर अर्थात् समिति के प्रमुख के पास है। उसके काम में बाधा डालने वाला जिलाधीश नहीं है और खण्ड विकास अधिकारी को उसकी आज्ञा का पालन करना पड़ता है।
3. पंचायती राज ने राजनीति को ग्रामीण स्तर पर ला दिया है और सरकार को अधिक बोधगम्य बना दिया है।
4. राजनैतिक शक्ति के विकेन्द्रीकरण का लक्ष्य बहुत अंशों में प्राप्त किया जा सकता है। लेकिन समुदायिक विकास के लिए लोगों में उत्साह जाग्रत करने के काम में अधिक सफलता नहीं मिली है। इसका अन्दाज इस बात से लगाया जा सकता है कि स्कूलों या सड़कों के लिए स्वीकृत बहुत सी रकमें, जिनमें कि जनता से 50 प्रतिशत अंश देने की अपेक्षा की जाती है, अप्रयुक्त रह जाती है। जहाँ कुल 25 प्रतिशत अंशदान चाहिए वहाँ कुछ अधिक सफलता मिलती है। जब गाँव वालों से पूछा जाता है कि, क्या वे पंचायती राज के हक में है।, वे कहते हैं कि हाँ, क्योंकि इससे गाँव में अधिक रूपया आता है। गाँव वाले अभी तक यह नहीं समझते कि राज्य उनका है। वह यही समझते हैं कि यह अभी भी जमींदारों का ही है। पंचायती राज ने एक ऐसा अखड़ा प्रस्तुत किया है जिसमें कि जमींदार जातियों के सदस्य अपनी सत्ता और प्रतिष्ठा के लिए लड़ सकते हैं।
5. गाँव वालों में चुनाव में अभिरूचि बढ़ रही है और वे यह महसूस कर रहे हैं कि धर्म और कर्म में ही जीवन की इतिश्री नहीं है, बल्कि सम्मलित आयोजन एक वास्तविक संभावना है। वे वोट की शक्ति को पहचान रहे हैं।

के. सी. पंचनदीकर और श्रीमती पंचनदीकर ने बड़ौदा के पास एक अध्ययन में बताया कि यहाँ कोरियों की बहुसंख्या थी[2] इसके अलावा अनाविल और गौरा दो जमींदार जातियों की संख्या उनसे थोड़ा ही कम थी। पंचायती राज के सूत्रपात ने ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी कि नेता बनने के लिए अब एक जाति से अधिक जातियों के सहयोग की आवश्यकता प्रबल हो गई।

राजस्थान के अध्ययन से स्पष्ट हुआ कि प्रधान एवं विकास अधिकारी के झगड़े पंचायती राज प्रशासन मे एक आम बात हो गये हैं।[3] उसके विपरीत, आन्ध्र प्रदेश की दो पंचायतों में विकास अधिकारी और समिति के अध्यक्ष के सम्बन्ध अत्यन्त सौहार्दपूर्ण पाये गये।[4] इसका कारण वहाँ के प्रमुख का लोकतांत्रिक दृष्टिकोण और विकास अधिकारी की व्यवहार कुशलता और योग्यता थी।

एम. एन. श्रीनिवास ने अपने अवलोकन के आधार पर बताया है कि पंचायती राज के प्रारम्भ ने निम्न जातियों, दलितों को आत्मसम्मान तथा शक्ति की एक नवीन अनुभूति प्रदान की है।5 बी. एस. खन्ना ने अपने अध्ययन में स्पष्ट किया है कि पंचायती राज के प्रभाव के कारण ग्रामीण अपनी समस्या के सम्बन्ध में अधिक बोलने लगे हैं। अपनी मांगों के सम्बन्ध में अधिक जोर देने लगे हैं और प्रशासन की कमियों तथा कार्यक्रमों की क्रियान्वयन सम्बन्धी असफलताओं के सम्बन्ध में अधिकआलोचना करने लगे हैं।[6]

पंचायती राज का सबसे बड़ा प्रभाव राजनैतिक जीवन पर पड़ता है। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में राजनैतिक चेतना जागी है और स्थानीय नेता धीरे–धीरे उच्चतर स्तर पर अपने राजनैतिक गठबंधन कर रहे हैं। खण्ड, क्षेत्र या पंचायत समिति स्तर पर यह गठबंधन काफी मजबूत बन चुके हैं और इस स्तर पर प्रायः प्रधान या प्रमुख का चुनाव राजनैतिक दल के आधार होता है।

मैसूर के अध्ययन में सदस्यों से यह पूछा गया कि वे क्यों राजनैतिक दलों में शामिल हुए।[7] 25 सदस्यों ने कहा कि उनके मित्रों ने उन्हें दल में शमिल होने पर मजबूर किया। उनमें से 23 काँग्रेसी थे। एक अनुसूचित जाति के सदस्य ने बताया कि उसे विकास अधिकारी ने काँग्रेस दल में होने के लिए प्रेरित किया, क्योंकि शासक दल होने के कारण उसे काँग्रेस दल से अनेक लाभ प्राप्त हो सकेगें। इसलिए पंचायती राज संस्थाओं का रूझान जब तक ऊपर की है, राज्य सरकार का शासक दल उन्हें अपनी शक्ति मजबूत करने के लिए इस्तेमाल कर सकेगा। उसी के पास समिति के अध्यक्षों को देने के लिए कुछ होगा। इस प्रकार पंचायती राज संस्थायें शासक दल का ही एक हथियार बन सकती है। इसका यही प्रतिकार है कि सत्ता व्यक्तिगत रूप से प्रधान या प्रमुख में निहित न कर समस्त सदस्यों को सौंपी जाय और इस बात का एक निश्चित और मापदंड निर्धारित किया जाय कि कौन पंचायत संस्थ उसे दिये गये कार्य को सुचारू रूप से संचालित कर रही है या नहीं।

गाँवों की राजनैतिक संरचना भी आज नए परिवेश ग्रहण कर रही है। ग्रामों की शक्ति संरचना आनुवंसिक इसमें जन–साधारण की सहभागिता बढ़ती जा रही है। ग्रामीण नेतृत्व अब मुख्य रूप से उन व्यक्तियों के हाथों में केन्द्रित होने लगा है जो माध्यम वर्ग के सदस्य हैं अथवा जिनके परिवार का परम्परागत शक्ति संरचना में कोई प्रत्यक्ष योगदान नहीं था। जी0 आर0 रेड्डी ने

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jan-Mar. 2025

अपने अध्ययन के द्वारा यह स्पष्ट किया कि पंचायती राज की त्रिस्तरीय व्यवस्था में जिला परिषदों और पंचायत समितियों के विभिन्न पदों पर आज भी वे ही व्यक्ति आसीन है जो आर्थिक रूप से सम्पन्न हैं, परन्तु ग्रामीण स्तर पर अब 60 से 68 प्रतिशत पिछड़ी और अनुसूचित जातियों के सदस्यों का प्रतिनिधित्व हो चूका है तथा इनमें से 72 प्रतिशत व्यक्ति ऐसे हैं जिनकी वार्षिक आय 2500 रूपये से भी कम है।[8] इसके अविरिक्त गाँवों के अधिक उत्साही तथा प्रगतिशील दृष्टिकोण वाले व्यक्तियों में नेतृत्व की नई क्षमताओं का विकास हुआ है। उनके अनुसार, ग्रामीण नेतृत्व में युवा सदस्यों का प्रभाव बढ़ा है तथा राजनैतिक आकांक्षाओं ने जाति, धर्म और नातेदारी के परम्परागत आधारों को कमजोर बना दिया है।[9]

पंचायती राज के व्यवस्था से सम्बद्ध विभिन्न विकास कार्यक्रमों के फलस्वरूप ग्रामीणों के जीवन स्तर तथा प्रति व्यक्ति आय में भी पर्याप्त सुधार हुआ है। आर्थिक सुधार के साथ ग्रामीण जीवन में व्याप्त अन्ध–विश्वासों तथा कुरीतियों का प्रभाव पहले की तुलना में कम हो चूका है। इसके फलस्वरूप आज ग्रामीण समुदाय में हीनता और निराशा की भावना उतने स्पष्ट रूप से दिखाई नही देती जैसे कि कुछ वर्ष पूर्व तक अनुभव की जाती थी।

पंचायती राज के प्रभाव से आज ग्रामीण गतिशीलता में भी वृद्धि हुई हैं यह गतिशीलता सामाजिक तथा आर्थिक सभी क्षेत्रों में विद्यमान है। नए बाजारों के ज्ञान तथा परिवहन की सुविधाओं की सहायता से ग्रमीण अपनी उपज का अब अधिक मूल्य प्राप्त करने लगे हैं। ग्रामीण महाजन, बंजारे तथा स्थानीय व्यापारी सहकारी समितियों के कारण ग्रामीणों का अधिक शोषण नहीं कर पाते। सामाजिक क्षेत्र में पंचायती राज व्यवस्था ने एक ऐसे वातावारण का निर्माण किया है जिसमें व्यक्ति अपने व्यवसाय अथवा सांस्कृतिक प्रतिमानों को हीन दृष्टि से नहीं देखता।

न्याय के क्षेत्र में भी पंचायती राज व्यवस्था से स्थिति में सुधार हुआ है? क्योंकि न्याय पंचायतें सस्ता और शीघ्र न्याय देने का प्रयत्न करती है।

पंचायती राज व्यवस्था के प्रभाव से जाति पंचायतों का प्रभाव क्षीण हुआ है। पिछले सैकड़ों वर्षों के इतिहास से स्पष्ट होता है कि जाति पंचायतें आर्थिक रूप से दुर्बल तथा सामाजिक रूप से पिछड़े हुए समूह का शोषण करने वाला प्रमुख आधार थी। गाँव में अन्ध–विश्वासों, भाग्यवादित तथा आर्थिक असमानता में वृद्धि करने के लिए भी जाति पंचायतें एक बड़ी सीमा तक उत्तरदायी थीं। पंचायती राज व्यवस्था के कारण अब जाति पंचायतों का प्रभाव इतना कम हो गया है कि अधिकांश गाँवों में जाति पंचायतों का अस्तित्व ही देखने को नहीं मिलता। इसके फलस्वरूप ग्रामीणों का जीवन अधिक स्वतंत्र, उदार और समतावादी बन गया है।

ग्रामीण जगत पर पंचायती राज व्यवस्था का नकारात्मक प्रभाव भी पड़ा है। इसके प्रभाव से ग्रामीण जीवन में कुछ विघटनकारी प्रवृत्तयाँ भी विकसित हुए हैं जिनमें गुटबन्दी, बढ़ते हुए संघर्ष और व्यक्तिवादिता आदि प्रमुख समस्याएँ हैं। सादिक अली दल ने स्पष्ट किया है कि पंचायती राज से ग्रामीण क्षेत्रों में गुट बढ़े हैं, अभी जन–सहयोग का अभाव है और पंचायती राज तथा सहकारी संस्थाओं में सहयोग की कमी है।[10] पी0 एन0 रस्तोगी ने अपने अध्ययन में पाया कि पंचायती राज व्यवस्था के फलस्वरूप ही ग्रामीण क्षेत्रों में पास्परिक सहयोग के स्थान पर गुटवाद को प्रोत्साहन मिला है?[11] सन् 1961 में आन्ध्र प्रदेश तथा राजस्थान में अखलि भारतीय पंचायत परिषद द्वारा नियुक्त अध्ययन दल ने पंचायती राज संस्थाओं के प्रति लोगों में काफी उत्साह पाया। इन संस्थाओं ने तकावी कर्ज की प्रणाली को सरल बनाने, उन्नत कृषि प्रविधियों को लोकप्रिय बनाने, स्कूल में छात्रों की उपस्थिति बढ़ाने तथा प्रशासकीय अकुशलता सम्बन्धी शिकायतों को कम करने में योग दिया। अध्ययन दल को इन संस्थाओं के कार्य संचालन में कहीं–कहीं कुछ कमियों का पता चला।[12]

पंचायती राज के सम्बन्ध में लोगों की धारणाओं का पता लगाने के उद्धेश्य से एल0 के0 सेन की देख–रेख में सामुदायिक विकास के राष्ट्रीय संस्थान के द्वारा सम्पूर्ण देश में से 365 गाँवों तथा 7,000 उत्तरदाताओं को निदर्शन के रूप में चुनकर अध्ययन किया गया। इस अध्ययन से प्राप्त तथ्यों से उजागर हुआ कि पंचायती राज और पंचायतों में चुने हुए सदस्यों के प्रति ग्रामीणों की प्रवृत्ति अनुकूल है। ग्रामीण पुराने परम्परागत नेताओं तथा सरकारी अधिकारियों के बजाय इन चुने हुए नेताओं को अधिक पसन्द करते हैं। उत्तरदाता ग्रामीण क्षेत्रों में गुटवाद की समस्या से चिन्तित नहीं थे। इस अध्ययन से यह भी निष्कर्ष निकाला गया कि पंचायती राज की स्थापना के पश्चात सामुदायिक विकास कार्यक्रम का क्रियान्वयन अधिक अच्छे ढँग से हुआ है।[13]

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Hugh Gray : 'The problem' in seminar panchayati Raj Number, September, 1963.
2. K. C. and J. N. panchnadikar : 'Domestic' structure and Adjustment in panchayati Raj Bodies in George Jacob's Readings on panchayati Raj in India, 1967.
3. Iqual Narain and P. C. Mathur : 'panchayati' Raj in Rajastan, in George Jacob's Readings on panxhayati Raj in India, 1967.
4. B. Sarves warh Prasad : 'Panchat Samities' in George jacob's Readings on panchayati Raj in India, 1967.
5. M. N. Srinivas : Social change in Modern India, 1966.
6. B. S. Khanna : some Emperical observations in the Punjab context in M. V. Mathur and Iqual Narain (Eds.) panchayati Raj, planning and Democracy, 1969, pp – 342-51.
7. K. S. Bhatt. : 'Emerging patterns of Leadership in panchayat Raj set up in Mysore,' in George Jacob's Readings on panchayati Raj in India, 1967.
8. G. Ram Reddy : social composition of panchayati Raj : Background of political Executives in Andhra', Economic and political weekly, Vol II, No 50, 23 Dec, 1967, p. 2211.
9. G. Ram Reddy : panchayati Raj and Rural Development in Andhra Pradesh, 1974, p-52.
10. Sadiq Ali : panchayati Raj : A-I. C.C. Economic Review, 1960, 12 (13-14).
11. P. N. Rastogi : polarization, politics and Economics Rural Life in East U.P., Indian Journal of social work (1968), 28(4). Pp-371-77.
12. R. N. Haldipur : sociology of panchayati Raj in ICSSR (Ed.) op. Cit. II, 1974, p. 82.
13. L. K. Sen : peoples image of community development and panchayati Raj, 1966, ii. p. 31.

*****